विचार संगम

भारतीय दर्शन, विज्ञान, साहित्य-कला और तकनीकी के विशेष संदर्भ में

सम्पादक
डॉ. दिनेश चन्द्र शर्मा

विचार संगम

भारतीय दर्शन, विज्ञान, साहित्य-कला और तकनीकी के विशेष संदर्भ में

सम्पादक :

डॉ. दिनेश चन्द्र शर्मा

Ph.D., D.Lit. (Sub.)

निदेशक, कॉम्पिटिशन प्लस ग्रुप ऑफ इन्स्टीट्यूशन,

अजमेर

Books n Books

51/1509, आचमन, वेदविहार,

लोहाखान, अजमेर-305001

प्रकाशक :

पुष्पा शर्मा

Books n Books

51/1509, आचमन, वेदविहार,

लोहाखान, अजमेर-305001

ई-मेल : bnbajmer@gmail.com

संस्करण

प्रथम 2025

ISBN : 978-81-993854-0-5

मूल्य - 400/-

रचना - विचार संगम-भारतीय दर्शन, विज्ञान, साहित्य-कला और तकनीकी के विशेष संदर्भ में

सम्पादक - डॉ. दिनेश चन्द्र शर्मा

मुद्रक - श्रीनिवास प्रिन्टोग्राफिक्स, अजमेर

31

मनु के चिंतन में प्रशासन

पिंकी सांखला
सह आचार्य (शिक्षा विभाग)
हुकुमचन्द नोबेल इंस्टीट्यूट ऑफ साईंस एण्ड टेक्नोलॉजी, अजमेर

भारतीय सभ्यता और संस्कृति का इतिहास अत्यंत प्राचीन, व्यापक और गहन है। यहाँ धर्म, नीति, शासन और समाज सभी एक-दूसरे से अभिन्न रूप से जुड़े हुए हैं। वैदिक काल से लेकर उत्तरवैदिक काल तक शासन की संरचना निरंतर विकसित होती रही, परंतु जिस व्यक्तित्व ने सर्वप्रथम शासन, धर्म और न्याय को एक व्यवस्थित रूप में प्रस्तुत किया, वह थे प्रजापति मनु। मनु की रचना मनुस्मृति केवल धर्मशास्त्र ही नहीं, बल्कि एक सशक्त राजनीतिक और प्रशासनिक ग्रंथ भी है। मनु ने अपने ग्रंथ में शासन, प्रशासन, न्याय, दंड, आर्थिक नीति, प्रजा-राजा संबंध और सामाजिक व्यवस्था के लगभग सभी आयामों का उल्लेख किया है।

मनु के चिंतन का आधार धर्म है। उन्होंने स्पष्ट कहा कि राज्य का अस्तित्व तभी सार्थक है जब वह धर्म की रक्षा करता है और लोककल्याण को सर्वोपरि रखता है। उनके अनुसार धर्म और राज्य एक-दूसरे के पूरक हैं, विरोधी नहीं। मनु के अनुसार राजा का प्रमुख कर्तव्य है धर्म के अधीन रहकर शासन करना। इसीलिए उन्होंने कहा — 'धर्मेण राज्यं संचरेत्।' अर्थात राजा को धर्म के अनुसार ही शासन करना चाहिए। मनु का यह दृष्टिकोण आधुनिक प्रशासनिक सिद्धांतों के समान है, जहाँ शासन की वैधता कानून और नीति पर आधारित होती है, न कि व्यक्ति की इच्छा पर।

मनु का प्रशासनिक दर्शन धर्माधारित है। उनके अनुसार समाज में तभी स्थिरता आ सकती है जब शासन की नींव नैतिकता, धर्म और न्याय पर रखी जाए। इस दृष्टि से मनुस्मृति भारतीय प्रशासनिक चिंतन की प्रथम और सर्वाधिक संगठित अभिव्यक्ति मानी जाती है।

मनु का राजनीतिक दर्शन

मनु का राजनीतिक दर्शन धर्मराज्य की संकल्पना पर आधारित है। उन्होंने राज्य को केवल शासन की संस्था नहीं माना, बल्कि एक नैतिक व्यवस्था के रूप में देखा जो मानव जीवन के सभी पक्षों को नियंत्रित करती है। मनु के अनुसार राज्य का उद्देश्य धमज़ की रक्षा करना और प्रजा के हित की साधना करना है। शासन का केंद्र

व्यक्ति नहीं, बल्कि धमज़ होना चाहिए। मनु कहते हैं कि जब लोग लोभ, मोह, ईष्याज़, और हिंसा के कारण अपने कर्तव्यों से विमुख होने लगे, तब समाज में अराजकता फैल गई। ऐसी स्थिति में लोगों ने मिलकर एक श्रेष्ठ पुरुष को राजा नियुक्त किया ताकि वह सबकी रक्षा करे और न्याय स्थापित करे।

मनु का यह विचार आधुनिक राजनीतिक चिंतकों की सामाजिक अनुबंध सिद्धांत से मेल खाता है। उन्होंने कहा कि जब कोई राजा नहीं होता, तब समाज भय से भर जाता है। 'अराजके हि लोकेऽस्मिन् सर्वतो भयवर्धनम्।' अर्थात बिना राजा के संसार में सर्वत्र भय का वातावरण फैल जाता है। अत: राजा का होना अनिवार्य है, क्योंकि वह समाज को सुरक्षा और अनुशासन प्रदान करता है। मनु के अनुसार, राज्य धर्म की रक्षा के लिए बना है और राजा उसका पालक है।

राजा की शक्ति असीम नहीं है। वह धर्म से बंधा हुआ है। उसका अधिकार तभी वैध है जब वह धर्मानुकूल हो। यदि वह अधर्म का मार्ग अपनाता है तो उसका शासन अन्यायपूर्ण हो जाता है और प्रजा का उससे विमुख होना स्वाभाविक है। इस प्रकार मनु का राजनीतिक दर्शन ईश्वर, धर्म और प्रजा, इन तीनों के सामंजस्य पर आधारित है।

राज्य की उत्पत्ति और आवश्यकता

मनु ने राज्य की उत्पत्ति का वर्णन अत्यंत दार्शनिक रूप में किया है। प्रारंभ में जब कोई राजा नहीं था, लोग अपनी इच्छानुसार आचरण करते थे। परिणामस्वरूप समाज में अन्याय, हिंसा, चोरी और अराजकता फैल गई। तब लोगों ने विचार किया कि किसी एक श्रेष्ठ व्यक्ति को राजा नियुक्त किया जाए जो धर्म की रक्षा करे और सबको भयमुक्त जीवन दे। इस प्रकार राज्य की उत्पत्ति जन-सहमति और आवश्यकता के आधार पर हुई।

मनु का यह दृष्टिकोण अत्यंत आधुनिक है। उन्होंने राज्य को एक सामाजिक व्यवस्था का अनिवार्य अंग माना। बिना शासन के मनुष्य अपने स्वार्थ के अधीन होकर कार्य करेगा और समाज में अराजकता उत्पन्न होगी। राजा का होना समाज की स्थिरता के लिए आवश्यक है। परंतु यह राजा केवल शासक नहीं, बल्कि रक्षक और धर्मपालक है।

राजा का स्वरूप और गुण

मनु के अनुसार राजा ईश्वर का प्रतिनिधि है, परंतु वह स्वयं ईश्वर नहीं। वह प्रजा का सेवक, रक्षक और धर्मपालक है। मनु ने राजा को पिता तुल्य कहा। राजा का धर्म है कि वह अपनी प्रजा की रक्षा करे, उन्हें न्याय दे और उनके सुख-दुख में सहभागी बने।

मनु ने राजा के गुणों का भी वर्णन किया है। राजा को सत्यप्रिय, धर्मनिष्ठ, दयालु, साहसी, संयमी, और विद्वान होना चाहिए। उसे लोभ, क्रोध, मद और अहंकार से दूर रहना चाहिए। राजा के लिए यह आवश्यक है कि वह नीति और धर्म के अनुसार ही निर्णय ले। यदि राजा धर्म से विचलित होता है तो राज्य का पतन निश्चित है। मनु ने कहा कि राजा को यह सदैव स्मरण रखना चाहिए कि उसका सुख प्रजासुख में निहित है। 'प्रजानां च हितं यः स्यात् स एव राजा।' अर्थात जो प्रजा के हित में कार्य करे, वही सच्चा राजा है।

राजा का स्थान उच्च है, परंतु उसकी सत्ता धर्म से नियंत्रित है। उसका अधिकार केवल तभी मान्य है जब वह धर्मानुसार शासन करे। यही मनु के शासन-सिद्धांत का मूल है।

प्रशासन की संरचना

मनु के अनुसार राज्य का प्रशासन एक संगठित व्यवस्था है, जो विभिन्न अंगों में विभाजित है। राजा उसका प्रमुख है, परंतु वह अकेले शासन नहीं करता। उसे मंत्रिपरिषद्, सचिवों, न्यायाधीशों, सैनिकों और अधिकारियों की सहायता मिलती है। यह प्रशासन धमज़, न्याय और नीति पर आधारित होता है।

मनु ने प्रशासन के तीन प्रमुख अंगों का उल्लेख किया है — राजनैतिक, न्यायिक और आर्थिक प्रशासन। इन तीनों का संचालन धर्म के अधीन रहकर होना चाहिए। मनु के प्रशासनिक ढाँचे में केंद्रीय सत्ता राजा के हाथ में है, परंतु उसकी नीति, निर्णय और कार्यान्वयन सब धर्म-संयम से बंधे हैं। यह व्यवस्था दैवी नहीं, बल्कि नैतिक और व्यावहारिक है।

मंत्रिपरिषद्

मनु के अनुसार राजा को शासन में मंत्रियों की सहायता अवश्य लेनी चाहिए। वह कहते हैं — 'एको न कुर्याद् राज्यं, राजा मन्त्रैः सहायवान्।' अर्थात् राजा को अकेले शासन नहीं करना चाहिए; मंत्रियों के सहयोग से कार्य करना चाहिए। यह विचार आधुनिक लोकतांत्रिक शासन की परामर्श प्रणाली से मिलता-जुलता है।

मंत्रिपरिषद् राजा को नीतियों के निर्धारण में मार्गदर्शन देती है। मंत्रियों को विद्वान, नीतिज्ञ, धर्मपरायण, ईमानदार और प्रजाहितैषी होना चाहिए। राजा को उनके साथ नियमित चर्चा करनी चाहिए और राज्य के हित में निर्णय लेना चाहिए। मंत्रियों की सलाह राजा के निर्णय को संतुलित बनाती है और उसे मनमानी से रोकती है। मनु ने कहा है कि राज्य की सफलता राजा और मंत्रिपरिषद् के सामंजस्य पर निर्भर करती है।

न्यायिक प्रशासन

मनु ने न्याय को राज्य की आत्मा कहा है। उनके अनुसार राजा का प्रथम और प्रमुख कर्तव्य न्याय करना है। 'राजा धर्मं परं कृत्वा दण्डं धारयेत् पृथक्।' अर्थात राजा को धर्म को सर्वोपरि रखकर दंड का विधान करना चाहिए। न्याय के माध्यम से ही राज्य में शांति और अनुशासन स्थापित होता है।

मनु ने न्याय के लिए चार आधार बताए — धर्म, साक्ष्य, व्यवहार और राजाज्ञा। इनमें धर्म सर्वोच्च है। न्याय का उद्देश्य सत्य की स्थापना है, न कि केवल अपराधी को दंड देना। न्यायाधीश को लोभ, भय, स्नेह या द्वेष से प्रभावित नहीं होना चाहिए। न्याय करते समय उसे केवल सत्य और धमज़ का विचार करना चाहिए।

मनु ने साक्ष्य, दस्तावेज, और परोक्ष प्रमाणों के प्रयोग की व्यवस्था भी दी। उन्होंने कहा कि जहाँ साक्ष्य न हो, वहाँ अनुमान और धमज़ के सिद्धांतों से निर्णय लिया जाए। इस प्रकार मनु ने न्यायिक प्रणाली को व्यवस्थित, विवेकपूर्ण और धर्माधारित बनाया।

दंडनीति

मनु की दंडनीति अत्यंत प्रसिद्ध है। उन्होंने कहा — 'दण्ड एव हि सर्वेषां वरतमो रक्षिता नृणाम्।' अर्थात दंड ही सबका रक्षक है। दंड के बिना समाज में अनुशासन नहीं रह सकता। दंड का उद्देश्य प्रतिशोध नहीं, बल्कि अपराधी का सुधार और समाज की रक्षा है।

मनु के अनुसार दंड को धर्म के अनुरूप और न्याय के सिद्धांतों के अनुसार लागू करना चाहिए। दंड का प्रयोग संयमित हो, अंधा नहीं। राजा को चाहिए कि वह अपराध की गंभीरता के अनुसार ही दंड दे। अधिक दंड अत्याचार है और कम दंड अन्याय। दंड के माध्यम से ही धमज़ की प्रतिष्ठा होती है और प्रजा भयमुक्त होकर जीवन व्यतीत करती है।

आर्थिक प्रशासन

राज्य की समृद्धि उसके आर्थिक प्रशासन पर निर्भर करती है। मनु ने राजा को आदेश दिया कि वह कर व्यवस्था को न्यायसंगत बनाए। कर ऐसा हो जो प्रजा पर अत्याचार न करे, किंतु राज्य की आवश्यकताओं की पूर्ति भी करे।

राजा को कृषकों, व्यापारियों, शिल्पियों और मजदूरों की रक्षा करनी चाहिए। मनु ने कहा कि राज्य को कोषागार का उपयोग केवल जनहित में करना चाहिए, व्यक्तिगत विलासिता में नहीं। उन्होंने चेतावनी दी कि अत्यधिक कर और भ्रष्टाचार से राज्य दुर्बल हो जाता है।

'यथार्हं कारयेत् कर्म, नातिव्ययमाचरेत्।' अर्थात राजा को उचित व्यय करना

चाहिए, व्यर्थ खर्च से बचना चाहिए। मनु के आर्थिक सिद्धांतों में कल्याणकारी राज्य की झलक मिलती है।

सैनिक प्रशासन

राज्य की रक्षा के लिए सुदृढ़ सेना आवश्यक है। मनु ने राजा को आदेश दिया कि वह अपनी सेना को सदैव अनुशासित, वीर और प्रशिक्षित रखे। सेना केवल युद्ध के लिए नहीं, बल्कि राज्य की सीमाओं और आंतरिक शांति की रक्षा के लिए भी आवश्यक है। 'नित्यं योधाभिरक्ष्यं स्यात् राज्यं स्वबलसंवृतम्।' अर्थात राज्य को सदैव अपने बल से सुरक्षित रखना चाहिए।

राजा को स्वयं भी युद्धकला में निपुण होना चाहिए। उसे युद्ध के समय अग्रणी भूमिका निभानी चाहिए ताकि प्रजा में उत्साह और विश्वास बना रहे।

प्रजा और राजा का संबंध

मनु ने प्रजा और राजा के संबंध को अत्यंत मानवीय रूप में प्रस्तुत किया। राजा को प्रजा का पिता कहा गया है और प्रजा को उसकी संतान। प्रजासुख ही राजसुख है। 'यस्य प्रजाः प्रसीदन्ति स राजा पूज्यते स्वयम्।' अर्थात जिस राजा की प्रजा प्रसन्न रहती है, वही वास्तव में पूज्य है।

राजा को चाहिए कि वह प्रजा के हित में कार्य करे, उनके दुःख-सुख में सहभागी बने। यदि राजा धर्म से भटक जाए या प्रजापीड़क बन जाए तो उसका पतन निश्चित है। मनु ने राजा और प्रजा के संबंध को पारस्परिक उत्तरदायित्व पर आधारित बताया — जहाँ राजा प्रजा की रक्षा करे और प्रजा राजा के प्रति निष्ठावान रहे।

धर्म और प्रशासन

मनु के प्रशासन में धर्म सर्वोच्च स्थान रखता है। राजा, मंत्री, न्यायाधीश और अधिकारी सभी धर्म के अधीन हैं। धर्म ही शासन का मार्गदर्शक सिद्धांत है। 'राजा धर्मस्य कारणं, धर्मो राज्ञः कारणम्।' अर्थात राजा धर्म का कारण है और धर्म राजा का। राजा को शासन करते समय यह स्मरण रखना चाहिए कि धर्म से विचलन राज्य के पतन का कारण बनता है। मनु का यह दृष्टिकोण आज के 'Rule of Law' के समान है जहाँ कोई भी व्यक्ति, चाहे वह कितना ही शक्तिशाली क्यों न हो, कानून से ऊपर नहीं होता।

मनु का प्रशासनिक आदर्श

मनु का प्रशासनिक आदर्श चार आधारों पर टिका है — धर्म, न्याय, लोककल्याण और संयमित शक्ति। राजा को धर्माधिष्ठित रहकर शासन करना चाहिए, न्याय की प्रतिष्ठा करनी चाहिए, लोककल्याण को सर्वोपरि रखना चाहिए और अपनी शक्ति का संयमित उपयोग करना चाहिए।

मनु ने शासन की ऐसी अवधारणा दी जिसमें धर्म, राजनीति और नैतिकता का सुंदर समन्वय है। उनका आदर्श प्रशासन न तो अत्याचारपूर्ण था और न ही निष्क्रिय; वह न्यायपूर्ण, संतुलित और प्रजाहितैषी था।

आधुनिक प्रशासन से तुलना

मनु का प्रशासन आधुनिक लोकतांत्रिक और कल्याणकारी शासन से कई रूपों में समानता रखता है। आज के "Rule of Law" की अवधारणा मनु के 'धर्मराज्य' से मिलती है। राजा का धर्म के अधीन होना उसी प्रकार है जैसे आज शासक कानून के अधीन होता है। मंत्रिपरिषद् प्रणाली आधुनिक 'कैबिनेट सिस्टम' की पूर्वछाया है। मनु का लोककल्याण सिद्धांत आज के 'Welfare State' के समान है। उन्होंने कहा कि राजा को प्रजा के सुख-दुख का ध्यान रखना चाहिए, जैसे पिता अपने पुत्रों का रखता है।

मनु की आलोचना और सीमाएँ

यद्यपि मनु का प्रशासनिक चिंतन अत्यंत संगठित और व्यावहारिक था, फिर भी आधुनिक विद्वानों ने उसमें कुछ सीमाएँ बताई हैं। उन्होंने वर्ण व्यवस्था को कठोर और स्त्री अधिकारों को सीमित बताया। किन्तु यह भी सत्य है कि मनु की व्यवस्थाएँ उस काल की सामाजिक परिस्थितियों के अनुसार थीं। उनका उद्देश्य सामाजिक अनुशासन और स्थिरता बनाए रखना था, न कि भेदभाव फैलाना। मनु के ग्रंथ को केवल रूढ़ दृष्टि से नहीं, बल्कि उसके दार्शनिक और प्रशासनिक पक्ष से समझना चाहिए। उनके विचार भारतीय शासन परंपरा की जड़ में बसे हुए हैं।

सारत: कहा जा सकता है कि मनु ने भारतीय प्रशासनिक दर्शन की नींव रखी। उन्होंने शासन को धर्म से जोड़ा, न्याय की सर्वोच्चता स्थापित की, लोककल्याण को राज्य का उद्देश्य बताया और राजा की शक्ति को नैतिक मर्यादाओं में बाँधा। मनु का प्रशासन केवल शासन की युक्तियाँ नहीं, बल्कि जीवन और समाज की व्यवस्था का आदर्श है।

आज भी भारतीय प्रशासनिक संस्कृति में मनु के विचार विद्यमान हैं। संविधान में निहित न्याय, समानता और नीति के सिद्धांत उसी प्राचीन भारतीय चिंतन की विरासत हैं। अत: यह कहा जा सकता है कि मनु का प्रशासनिक दर्शन भारतीय संस्कृति की आत्मा है, जिसमें धर्म ही शासन की दिशा है और लोककल्याण ही उसका लक्ष्य। मनु का यह विचार आज भी उतना ही प्रासंगिक है जितना हजारों वर्ष पूर्व था।

'राजा धर्मस्य मूलं, धर्म: प्रजासुखस्य कारणम्।' यही मनु के प्रशासन का शाश्वत संदेश है।